fgeky; fuoklh vkj fulx

Himalaya Man and Nature

Vol.-2 No.2 | Bilingual News Letter | December, 2009

(for private circulation)

"If there were no Himalayas, there would be no Ganga, Yamuna, Brahmaputra or Indus. If there were no Himalayas these rivers would not have been there, and there would have been no rains. If there were no rains, India would be a dead desert like Sahara."

- M.K.Gandhi

In this Issue……..

हिमकॉन सामुदायिक पेयजल शोधन संयंत्र

नदी तू बहती रहना

उत्तराखण्ड में बांध व पन-बिजली परियोजनाओं पर पुनर्विचार हो

बीज संरक्षण एवं रोपण

Addressing water quality issues in Himalayan region.

Vanishing Wisdom Endangered Landscapes- A case study on the Chaals in Tehri and Uttarkashi.

जल संरक्षण तथा प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन कार्यक्रम – एक रपट

आग लगी है पानी में

बूंद-बूंद को तरस रहा,
प्रदेश तेरी निगरानी में।

खलियानों में होली जलती,
आग लगी है पानी में।

सूखे नाले, सूखे पोखर,
रेत उड़ती नाली में।

ये किसान कब तक बैठेगा,
पानी की रखवाली में।

पानी तह के नीचे पहुँचा,
बोरिंग सारे फेल हुये।

सारस देख आसमान को,
दिन भर बैठे नाली में।

ये कुदरत का खेल है कोई,
या प्रकोप निराला है।

एक तरफ तो बाढ़ का पानी,
दूजी बूंद न प्याली में।

हाथ पर हाथ रखे बैठे हों,
कुछ तो करो कंगाली में।

जैसे भी हो पानी पहुँचे,
खलियानों की नाली में।

- सुशीला भण्डारी

हिमकॉन सामुदायिक पेयजल ''शोधन संयत्र''

वर्त्तमान समय में पानी जनित बीमारियों का प्रकोप दिन प्रति दिन बढ़ता ही चला जा रहा है तथा स्वच्छ पानी का वितरण एक कल्पना मात्र ही रह गई है। पहाडों में दिन-प्रति-दिन प्राकृतिक स्रोत और खाल मानवीय एवं जैविक पदार्थो के कारण गन्दे होते चले जा रहे हैं। यदि नीरी (राष्ट्रीय पर्यावरण एवं अभियांत्रिकी शोध संस्थान) नागपुर के सर्वे को आधार मानें, तो पहाडों में अस्सी प्रतिशत बीमारियां पानी जनित हैं। इन बातों को आधार मान कर हिमकॉन के द्वारा नीरी, नागपुर के स्लो सैण्ड फिल्टर के डिजाईन को और अधिक सरल व कम खर्चीला बनाया गया है जिससे कि गांववासी इसका प्रयोग कर सकें। मंद बालू छन्ना या स्लो सैण्ड फिल्टर आम तौर पर एक ईंट या पत्थर का बना बक्सा के आकार का टैंक होता है। जिसमें कि अलग-अलग आकार की गिट्टी/रेत तहों में भरी रहती हैं तथा आधार पर ईटों की नालियां बनी रहती है। जिनके माध्यम से पानी रिस कर बाहर निकल जाता है।

गन्दगी के छोटे-छोटे कण गिट्टी/रेत पर जमा होते रहते हैं। तकरीबन 15 दिनों में गन्दगी की एक पतली तह बन जाती है तथा पानी में उपस्थित बहुत छोटे-छोटे कणों और सूक्ष्म जीवों को रोक लेती है। जब तक पानी फिल्टर से बहता रहता है तब तक सूक्ष्म जीव नष्ट नहीं होते बल्कि बढ़ते हैं।

कुछ दिनों के बाद सूक्ष्म जीवों की संख्या इतनी अधिक हो जाती है कि वे लगभग सभी रोगाणुओं को समाप्त कर देते हैं और बीमारी के कीटाणु सूक्ष्म जीवों की झिल्ली, (शैवाल) से पार नहीं जा सकते। इस प्रक्रिया से पानी को साफ किया जाता है। स्लो सैण्ड फिल्टर की कार्यक्षमता इस प्रकार से है।

<u>स्लो सैण्ड फिल्टर के वि'ाय में तकनीकी जानकारी</u>

1. स्लो सैण्ड फिल्टर मे एक चौकोर बक्सा होता है

2. स्लो सैण्ड फिल्टरेशन में पानी की बहाव की गति 0. 1 से 0.2 मी0 प्रति घंण्टा या (0.1-0.2 क्यूविक मी0 प्रति घंटा फिल्टर बड़े में) रखा जाता है।

3. इस तकनीक के सफल संचालन के लिए पानी में घुलित ऑक्सीजन की मात्रा भी आवश्यक होती है।

4. यदि फिल्टर के जल में घुलित ऑक्सीजन की मात्रा 0.5 मी0 ग्रा0 प्रति ली0 से कम हो जाए तो जैविक पदार्थो का विखण्डन सूक्ष्म जीवों द्वारा नहीं हो पाएगा। ऐसी परिस्थिति में ऑक्सीजन रहित अवस्था बन सकती है। अतः इस समस्या के निदान हेतू शुद्ध होने वाले जल को पर्याप्त मात्रा में वायु के सम्पर्क में रखा जाता है ताकि वातावरण का ऑक्सीजन जल में आसानी से घुल सके। कच्चे जल में मिट्टी गाद आदि को जमने के बाद ऊपर के पानी को फिल्टर हेतू उपयोग करें।

5. फिल्टर के सुचारू रूप से कार्य करने हेतू यह आवश्यक है कि फिल्टर के उपरान्त जल में कम से कम 3.0 मि0ग्रा0 प्रति ली0 ऑक्सीजन विद्यमान रहें।

पेयजल हेतू ऑक्सीजन की यह मात्रा (3.0 मी0ग्रा0) कम होती है अतः जल में और ऑक्सीजन घुलन की प्रक्रिया बढ़ाने हेतू फिल्टर एवं स्टोरेज टैंक की दूरी एवं पानी की गति बढ़ाकर पूरी की जाती है।

स्लो सैण्ड फिल्टर की क्षमता :

यद्यपि इस विधि द्वारा जल को पूर्ण रूप से शुद्ध किया जा सकता है फिर भी इस फिल्टर की क्षमता कच्चा जल जिस जल को फिल्टर किया जाता है उसकी गुणवत्ता पर भी निर्भर करता है। फिर भी जल के शुद्धीकरण की क्षमता निम्न घटकों पर निर्भर करती है।

क- कच्चे जल की गुणवत्ता
ख- फिल्टर में पानी के बहाव की गति
ग- फिल्टर में बालू के कणों का आकार

घ- फिल्टर के जल में घुलित ऑक्सीजन की मात्रा एवं तापमान औसत स्थिति में स्लो सैण्ड फिल्टर तकनीक द्वारा जल अशुद्धता को दूर करने को निम्न तालिका मे दर्शाया गया है-

1. जैविक पदार्थ- इस तकनीक से जल में विद्यमान कार्बनिक पदार्थ अपघटित हो जाते हैं और जैविक पदार्थो से मुक्त हो जाते हैं।

2. जीवाणू-क-. इस तकनीक से 99 से 99.9 प्रतिशत बीमारी उत्पन्न करने वाले बैक्टीरिया फिल्टर द्वारा सोख लिये जाते हैं।

ख- पैराशाइट निमोटश एवं अन्य जलीय जंतुओं के सिस्ट लार्वा आदि को फिल्टर कर देता है। इकोलाई बैक्टीरिया जो जल जनित बीमारियों का मुख्य कारक है यह फिल्टर पूर्ण रूपेण अलग कर देता है।

3. वि"kाणु- पूर्ण विकसित स्लो सैण्ड फिल्टर (चूमूडक (काई)/कार्ययुक्त द्वारा सभी प्रकार के विषाणुओं को फिल्टर कर देता है।

4. रंग- जल में विद्यमान रंग को यह बिल्कुल हटा देता है।

5. गंदलापन- पेयजल हेतू टरबीडिटी की मात्र को 10 एन0 टी0 यू0 रखा गया है। इस फिल्टर द्वारा जल में विद्यमान टरबीडिटी (100 से 200 एम0 टी0 यू0) को 1.0 से एम0 टी0 यू0 से भी कम कर देता है। अर्थात इस फिल्टरेशन तकनीक से पूर्णरूप से शुद्ध एवं स्वच्छ पेयजल प्राप्त किया जा सकता है।

इस तकनीक की सीमाएं-

1- यद्यपि यह तकनीक जल शुद्धीकरण हेतू सस्ती एवं कारगर तकनीक है जिससे जल में विद्यमान जैविक पदार्थ मिट्टी के कण एवं रोगाणु वाहक वैक्टीरिया आदि को पूर्णरूप से छानकर पेयजल हेतू सुरक्षित बनाता है फिर भी कच्चे जल में उपस्थित प्रदूषण की मात्रा इस फिल्टर की सीमाओं को प्रभावित कर सकता है।

2- इस फिल्टर के निर्माण तथा सूर्य की किरणों से बचाव हेतु छत का होना आवश्यक नहीं है जिससे कि फिल्टर की परत पर चुमूडके की परत विकसित हो सकें।

3- कच्चे जल की गुणवत्ता में अचानक परिवर्तन होने से भी फिल्टर की कार्यक्षमता प्रभावित हो सकती है।

स्लो सैण्ड फिल्टरेशन तकनीक

यह तकनीक जल को शुद्ध करने की एक ऐसी व्यवस्था है जिसमे कच्चे जल (रॉ-वाटर जिसे शुद्ध करना है) को एक पोरश (जल को छानने) माध्यम से फिल्टर किया जाता है।

जल को इस माध्यम से गुजरने के दरम्यान जल की गुणवत्ता में काफी सुधार हो जाता है, जल के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में अवकरण (रिडक्सन) अलग करना पोरस फिल्टर के विकसित होने पर फिल्टर की सतह पर काई जैसी एक पतली परत विकसित हो जाती है जिसे चुमुडके कहते है। यह परत अनेकों तरह के सुक्ष्म जीवों से विद्यमान होती हैं जो कार्बनिक पदार्थों को विखण्डित करती हैं जबकि सूक्ष्म कणों को यह परत नीचे जाने से रोक देती हैं।

स्लो सैण्ड फिल्टरेशन तकनीक रेपिड सैण्ड फिल्टरेशन तकनीक से बिल्कुल अलग होती है क्योंकि स्लो सैण्ड फिल्टरेशन तकनीक में फिल्टर की सतह के ऊपर चूमूडके की परत होती है और जल का शुद्धीकरण इसी परत द्वारा होता है।

रेपिड फिल्टरेशन तकनीक में केवल बड़े आकार वाले सस्पेन्डेड कणों को निकाला जाता है एवं इसे हटाने के लिए वर्क वाटर का अलग से इस्तेमाल करना पड़ता है।

स्लो सैण्ड फिल्टरेशन तकनीक में सस्पेन्डेड कणों को हटाने के लिए वर्क वाटर की जरूरत नहीं पडती है। इस तकनीक में फिल्टर की ऊपरी परत एवं चुमुडके की परत को समय-समय पर बदल दिया जाता है। जिसे आसानी से बिना अतिरिक्त जल के उपयोग के बिना भी किया जाता है।

स्लो सैण्ड फिल्टर की विशेषता

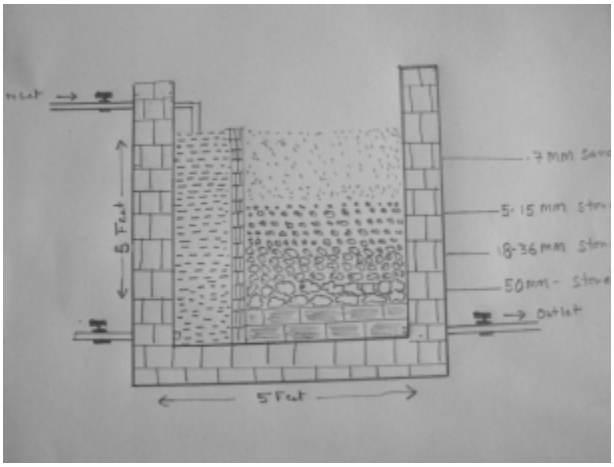

यद्यपि इन दिनों अनेक प्रकार के जल शुद्धीकरण संयंत्र बाजार में उपलब्ध हैं जिनसे जल को शुद्ध किया जाता है। किन्तु इनकी तुलना में इस तकनीक की अनेक विशेषताएं हैं-

1. इस तकनीक का डिजाईन बहुत ही सरल है जिसे स्थानीय पदार्थों से आसानी से बनाया जा सकता है एवं सरलतापूर्वक जल शुद्व किया जा सकता है।

2. इसे बनाने के लिए किसी कुशल कारीगर की आवश्यक्ता नहीं है। तथा इस फिल्टर को चलाने के लिए किसी अनुभवी की आवश्यकता भी नहीं है। इसकी तकनीक में केवल पंम्प एवं अन्य निर्माण को जोड़ने का कार्य हैं।

फिल्टर के लिए स्थान चयन का आधार

- पानी के स्रोत (जहां से पानी निकलता है) में मिट्टी व कंकण मिश्रित हों।

- पानी में कीड़े व मकोड़े साथ में बह करके आते हों।
- पानी रंगीन दिखता हों ।
- पानी का स्रोत खुली जगह या रास्ते पर हो जहां पर गन्दा होने की संभावना बनी रहती हों ।
- खुली गाड़ का पानी लिया जा रहा हों।
- स्रोत के उपरी हिस्से में बस्ती बसी हों।

ग्राम चोपड़ियाली में फिल्टर बनाने का आधार

ग्राम चोपड़ियाली में हिमकॉन संस्था द्वारा दो फिल्टर यूनिटों का निर्माण किया गया हैं। यहां पर 45 परिवारों को पानी इन फिल्टरों द्वारा दिया जा रहा हैं।

- सीधे खाल का पानी प्रयोग किया जा रहा हैं।
- आम व जंगल का रास्ता होने की वजह से मानव एवं पशुओं द्वारा प्रदूषित किया जाता हैं।
- वर्षाकाल में मिट्टी व गोबर स्रोत में मिल जाता हैं।
- ऊपरी हिस्से में चीड़ के वन के कारण प्रदूषित होता हैं।
- स्रोत के ऊपरी हिस्से में कुछ परिवार बसे हैं जिसके कारण भी स्रोत गन्दा होता हैं।

ग्राम किमसैण में फिल्टर बनाने का आधार

ग्राम किमसैण में एक फिल्टर यूनिट का निर्माण किया गया है तथा 17 परिवार इसके पानी का इस्तेमाल कर रहे हैं।

- स्रोत पर चैम्बर का निर्माण नहीं किया गया हैं।
- वनस्पतियां सड़ कर पानी में मिलती रहती हैं।
- पानी के स्रोत्र के आस पास बजरी (लाइम स्टोन) वाली मिट्टी होने की वजह से पानी में चूने की मात्रा रहती हैं।
- वर्षाकाल में मिट्टी व गोबर स्रोत में मिल जाता हैं।

स्थानीय लोगों की प्रतिक्रिया

स्थानीय लोगों से इस फिल्टर के उपयोग के पश्चात् जो विचार सामने आये हैं-

- इसके पानी के प्रयोग के पश्चात् पहले जो शरीर में खुजली व वर्षाकाल में उल्टी व दस्त की बीमारी होती थी, का प्रभाव अब नहीं हैं।
- पानी में गंदलापन समाप्त हो गया हैं।
- पानी के स्वाद में परिवर्तन हुआ हैं।
- वर्षाकाल में पाईपों पर मिट्टी व रेत जमा हो जाती थी अब नहीं होती हैं।
- इस फिल्टर का रख-रखाव बहुत सरल हैं।
- इसका निर्माण हरेक गांव में होना चाहये।
- इस प्रतिक्रिया में ग्राम चोपड़ियाली से श्री गुलाब सिंह, श्री रघुवीर सिंह, श्रीमती अनिता पयाल तथा केमसैण से श्री खेमराज बहुगुणा, श्रीमती भुवनेश्वरी देवी व श्रीमती सरोजनी देवी ने इस फिल्टर का प्रयोग 6 माह तक करने के पश्चात यह जानकारी दी।

- **राकेश बहुगुणा,** हिमकॉन, साबली, टिहरी गढ़वाल

नदी तू बहती रहना

देहरादून राजपुर रोड़ पर स्थित, मसीही ध्यान केन्द्र, में **''नदी तू बहती रहना''** नुक्कड़ नाटक, जिसे जल संवाद नाम से उत्तराखंड में प्रदर्शित किया गया। इस नाटक का विचार और आधार नदियों पर विभिन्न संकटों को अभिव्यक्त करना रहा। इस नाट्य प्रयोग में गंगा घाटी और यमुना घाटी के 30 युवाओं ने भाग लिया। यह एक कार्यशाला के बाद तैयार किया हुआ जल संवाद था। नाटक की पृष्ठभूमि में पर्वतीय लोक परंपराओं, लोक नाट्यों और लोक संस्कृति का आधुनिक परिस्थितियों में परिवर्तित होना आश्चर्य में डालने वाला था, जैसे - एक गीत लोकगीत की धुन पर लिखा गया- ''उठती हुई आवाजों की बानी, सुनता है नदियों का बहता पानी, खेतों में उगते हैं डंडे, झंडे, जिन्दा हैं लोगों के पैने हथकंडे''। पर्वत से बहती है पानी, जवानी, के माध्यम से पलायन और भ्रष्टाचार में फंसी नदियों की अविरल धारा की व्यथा व्यक्त की गयी। दृश्यों में नदियां भी कपड़ों की तैयार की गयी। आज की अवैज्ञानिक परियोजनाओं का पहाड़ पर हावी होना प्रदर्शित किया गया। इसमें नेता, अफसर, गुंडों, एवं निजी कंपनियों के बिके हुये ठेकेदारों के सामने जनमत का सीधा संवाद एक विरोध के रूप में प्रकट हुआ। हिन्दी नाटक में पर्वतीय परिवेश का समावेश इस नाट्य संवाद की उपलब्धि रही। स्पष्ट संवादों, आत्मविश्वास और रोचकता से तैयार इस अभिव्यक्ति को दूरस्थ पर्वतीय क्षेत्रों से आयी महिलाओं ने अपनी अभिव्यक्ति माना। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण संदेश यह था कि प्रभावित लोगों ने अपनी-अपनी भूमिका बहुत स्वभाविकता से निभाई। यह सभी पहली बार नुक्कड़ नाटक के संवाद प्रयोग में शामिल हुये थे, जोकि एक परिपक्व रंगकर्मी की तरह नजर आये।

यह संवाद एक चर्चा का विषय बना है, जिसमें जल-विद्युत परियोजनाओं से त्रस्त जल, जंगल, जमीन से संबंधित गीतों को भी शामिल किया गया, जिसमें ''पानी में आग लगी है इन दिनों'' प्रमुख था। जिसमें सुनील बैसारी, अंजू, रमेश, राजकुमारी, गोल्डी, विजयलक्ष्मी, दिनेश भारती, ममता रावत, संगीता, सुनीता, तुलसी लाल, मुकेश बैसारी, खेमराज सिंह, महिमानंद, मनवीर, प्रवीण कुमार, सोहन, खुशपाल आदि ने भाग लिया। इस अवसर पर स्वतंत्रता सेनानी रमा शर्मा, संगीता, जलसंस्कृति मंच के वरिष्ठ रंगकर्मियों में केदार सिंह, समेत उत्तराखंड के 50 गांवों के लोगों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

- **सुरेश भाई**

हिमालयी पर्यावरण शिक्षा संस्थान, मातली, उत्तरकाशी

उत्तराखण्ड में बांध व पन–बिजली परियोजनाओं पर पुनर्विचार हो

टिहरी बांध परियोजना से लगभग एक लाख लोग विस्थापित हुए जिनका आज तक संतोष जनक पुनर्वास नहीं हो सका। बहुत से अन्य लोग विस्थापित हुए बिना भी संकटग्रस्त हो गए, जैसे उन गांवों के लोग जो टिहरी जलाशय की ओर धंस रहे हैं या जो टापूनुमा हो गए हैं। इस परियोजना से जुड़े गंभीर खतरों जैसे टिहरी बांध से अचानक निकले फ्रलैश फ्रलड से नीचे बहुत भयंकर तबाही मचने की संभावना को सरकार द्वारा नियुक्त विशेषज्ञ समितियां स्वयं विस्तार से बता चुकी हैं। मनेरी परियोजना के निर्माण के विस्फोटों से जहां अत्यधिक क्षति हुई, उन्हीं जामक जैसे गांवों में भूकंप सबसे अधिक जानलेवा सिद्ध हुआ, यह सब देख चुके हैं। इन परियोजनाओं व इनकी ट्रांसमिशन लाईन बिछाने के कारण हिमालय व तराई के लाखों पेड़ काट दिए गए या काटने की तैयारी है।

इन पूर्व अनुभवों के बावजूद हाल के वर्षों में ऊपर से पनबिजली उत्पादन बढ़ाने के अति महत्वाकांक्षी लक्ष्य तैयार किए गए व इनको प्राप्त करने के लिए विभिन्न कंपनियों में परियोजनाओं का आवंटन कर दिया गया। इस प्रक्रिया में गांव समुदाय की स्थानीय परिस्थितियों की जानकारी का लाभ उठाकर इस कार्य को करने की कोई गुंजाइश नहीं थी। कई अनुचित उपाय चंद असरदार लोगों को कंपनियों की ओर करने के लिए अपनाए गए जबकि गांव समुदाय के व्यापक व दीर्घकालीन हितों की पूर्ण उपेक्षा की गई। गांववासियों में बाहरी लोगों ने दरार उत्पन्न की व बाहरी लोगों के आकर बसने से कई पंचायतों में स्थानीय लोगों की आवाज दबने लगी। हजारों परिवारों से बिना कोई अनुमति प्राप्त किए ही उनके घरों व खेतों के पास ऐसे कार्य किए गए जिससे उनकी आजीविका, आवास व स्वास्थ्य उजड़ गये।

यह हजारों परिवारों का अनुभव रहा है कि बांध निर्माण की प्रक्रिया में उनके खेत, चरागाह, जल-स्रोत, आवास बुरी तरह क्षतिग्रस्त हुए हैं, स्वास्थ्य समस्याएं बढ़ गई हैं व आपदाओं, विशेषकर भू-स्खलन की संभावना बढ़ गई है। जो लोग पूरी तरह विस्थापित हो रहे हैं, उनकी समस्या अलग है। सुरंग बांधों के निर्माण के अनेक स्थानों में जहां एक बड़े क्षेत्र में नदी का अस्तित्व ही खतरे में है, वहां लोग भूकंप की स्थिति में अत्यधिक प्रभावित होने से आतंकित भी हैं। जितनी तेजी से व बड़े पैमाने पर पनबिजली योजनाओं को बढ़ाया जा रहा है, वह जारी रहा तो निकट भविष्य में अधिकांश लोग इन दुष्परिणामों से प्रभावित होंगे।

सैकड़ों वर्षों से करोड़ों लोगों की श्रद्धा का केन्द्र यह गंगा का जन्म-स्थल, इसकी नदियां व प्रयाग बहुत जल्दबाजी में इस तरह बदले जा रहे हैं कि नदियां व उनके संगम बहुत क्षतिग्रस्त होंगे व यहां दुर्घटनाओं-आपदाओं की संभावना बहुत बढ़ जायेगी। गंगा जल की विश्वविख्यात गुणवत्ता पर बहुत प्रतिकूल असर पड़ेगा। इससे पहले कि इन परियोजनाओं से जुड़ा विनाश असहनीय स्थिति में पहुंच जाए, हम राज्य व केन्द्रीय सरकार से अपील करते हैं कि इन सभी परियोजनाओं पर वह खुले मन से पुनर्विचार करे व जब तक यह प्रक्रिया संतोषजनक ढंग से पूर्ण न हो तब तक इस निर्माण कार्य को रोक दे। इस पुनर्विचार में ग्राम सभाओं, स्थानीय लोगों विशेषकर महिलाओं को भरपूर जोड़ा जाए। इन परियोजनाओं में प्रतिकूल प्रभावित परिवारों की क्षतिपूर्ति के लिए न्यायसंगत कार्यवाही बहुत जरूरी है। साथ ही नदियों के प्रदूषण को नियंत्रित करना भी जरूरी है।

पुनर्विचार के दौर में इस ओर विशेष ध्यान दिया जाए कि पनबिजली का जितना उत्पादन जन-जीवन व पर्यावरण को क्षति पहुंचाए बिना संभव है, उतना ही किया जाए। ऐसी छोटी परियोजनाओं की जिम्मेदारी गांव समुदायों को दी जाए। जो स्थानीय जानकारी का बेहतर उपयोग करते हुए, गांव व नदी को क्षतिग्रस्त किए बिना पनबिजली उत्पादन करें। गूलों-नहरों पर और परम्परागत घराट से जोड़कर छोटे स्तर की पनबिजली उत्पादन की अच्छी संभावनाएं हो सकती हैं। मूल बात यह है कि इनसे जन-जीवन, नदी, जंगल आदि की क्षति न हो। बिजली का उपयोग सबसे पहले स्थानीय गांवों में आय व रोजगार सृजन के लिए होना चाहिए। इसी तरह उत्तराखण्ड के जल का उपयोग सबसे पहले यहां के लोगों के जल-संकट को दूर करने के लिए होना चाहिए।

- भारत डोगरा

साभार- जलकुर घाटी संदेश, श्रृंखला-15, वर्ष 2009

बांज संरक्षण एवं रोपण

बांज एक बहुत ही उपयोगी प्रजाति का पौधा होता हैं। यह मिश्रित रूप में भी पाया जाता हैं। बांज जिसका कि वानस्पतिक नाम क्वेरकस ल्यूकोट्राइकोफोरा हैं। यह गढ़वाल तथा कुमांऊ के जंगलों में बहुतायत से पाया जाता हैं। इसका यहां के लोगों के जीवन में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। बांज का उपयोग यहां के निवासी अपने पशुओं को खिलाने के लिए चारे के रूप में करते हैं। इसके अतिरिक्त बांज के पौधों की लकड़ियों का उपयोग जलाने के लिए भी किया जाता हैं। बांज के पौधों से विभिन्न प्रकार के कृषि उपकरण, काष्ठ का सामान भी इस पौधे से प्राप्त होता है। बांज के जंगलों से मृदाक्षरण होने का खतरा भी कम होता है तथा यह जल संरक्षण तथा नमी को बनाये रखने में भी सहायक होता है। बांज के पौधों के नीचे विभिन्न प्रकार की झाड़ियां भी पायी जाती हैं। अत्यधिक उपयोगी होने के कारण बांज को पर्वतीय क्षेत्र का हरा सोना भी कहा जाता है। बांज मध्यम से लेकर विशाल आकार का वृक्ष होता है।

बीज एकत्रीकरण एवं संग्रह- बांज के बीजों का एकीकरण हमेशा स्वस्थ, निरोगी, सुडौल एवं तेज पैदावार वाले वृक्षों से दिसम्बर से लेकर फरवरी माह में करना उचित होता है। मुख्यतया बीजों को वृक्ष से सीधे तोड़कर ही इकट्ठा करना चाहिए भूमि पर पड़े बीजों को इकट्ठा नहीं करना चाहिए क्योंकि भूमि पर पड़े बीजों में रोग एवं कीटों से ग्रसित होने की सम्भावना रहती है। बीजों को फलों सहित इकटठ् करना उचित रहता है। बीजों का संग्रह हमेशा कम ताप तथा अधिक नमी वाले स्थानों पर करना चाहिए। बांज के बीजों को संग्रह करने की सबसे उपयुक्त विधि यह है कि बांज के बीजों को पानी में रखकर भिगोना चाहिए। पानी में तैरते हुए बीजों को बीज पात्र से अलग कर देना चाहिए इससे यह अनुमान लगाया जाता है कि जो बीज पानी मे तैर रहें हैं वे खराब हैं तथा जो बीज पानी में डूब गये हैं वे बीज ही संग्रह करने योग्य हैं। बीजों को इनसैक्टीसाइड से उपचारित करने के पश्चात जालीदार बोरों में भरकर गडढों में दबाकर रख देना चाहिए।

पौध'ाला का चयन- पौधशाला के लिए एक सुरक्षित स्थान का चयन करना चाहिए जहां पर न अत्यधिक गर्म हो न अत्यधिक सर्दी (घाटी वाले स्थान) हों ऐसे स्थान का चयन पौधशाला बनाने के लिए उपयुक्त होता है। पौधशाला में बांज की बुवाई करने से पहले खेतों में हल चलाकर पाटे से भूमि को समतल करना चाहिए तथा विभिन्न खरपतवारों को खेत से अलग कर देना चाहिए। पौधशाला में बीजों की बुवाई के लिए खेतों में क्यारियां बना दी जाती है। पौधशाला में क्यारियों को थोड़ा-सा ऊपर बना दिया जाना जरूरी रहता है तथा पानी निकासी के लिए नालियां बनानी चाहिए इससे वर्षा का पानी नालियों की सहायता से खेत में नहीं ठहरता। पौध ाशाला में बांज के पौधों की बुवाई फरवरी-मार्च माह में करनी चाहिए। बीजों को क्यारियों में 2 से 3 सेमी0 की गहराई पर बोना चाहिए इससें बीजों का अंकुरण अच्छा होता है परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि बांज के बीजों को अधिक गहराई पर नहीं बोना चाहिए अगर बीजों को अत्यधिक गहरा बोया गया तो उसमे कम बीज ही अंकुरित होंगे तथा बीजों के खराब होने का खतरा भी बना रहता हैं।

सामान्यतः बीजों का अंकुरण 25 से 30 दिनों

में पूर्ण हो जाता है। बीजों के अंकुरित होने के कुछ दिनों के पश्चात् उनकी निराई-गुड़ाई करना भी आवश्यक होता है। इससे उनकी पैदावार अच्छी होती है।

पौधरोपण- बांज के पौधों का रोपण बरसात में किया जाना उचित रहता है। इनका रोपण जून के प्रथम सप्ताह से लेकर जुलाई तक किया जाता है। पौधरोपण करने से पहले खाली स्थान का चयन करना चाहिए तथा एक घन फीट आकार के गड्ढ़े तैयार कर लेने चाहिए। गड्ढ़ों की दूरी 6 से 6 फीट की दूरी पर गड्ढ़े करने चहिए। 15 से 20 सेमी0 ऊंचाई वाले पौधों का रोपण जुलाई-अगस्त में करना चाहिए। पौधों को अच्छी प्रकार से गड्ढों में रोपित किया जाना चाहिए रोपित करने के पश्चात उनकी सिंचाई करनी भी आवश्यक होती है। आरम्भ में रोपित पौधों की देखभाल करनी चाहिए उनको सामान्यतया सूखे तथा पशुओं से एवं जंगलों में लगी आग से उनकी सुरक्षा करनी चाहिए क्योंकि इससे पौधों को अत्यधिक हानि होती है। सूखे पौधों के स्थान पर नये पौधों को रोपित किया जाना चाहिए।

'ाखा कटान-बांज के पेड़ों को सबसे अधिक हानि पेड़ों की शाखाओं को काटने, अनियंत्रित ढंग से पत्ती कटान से होती है। गांवों के लोगों द्वारा अपने पालतू पशुओं को खिलाने के लिए चारे के लिए लोग बांज के पौधों की टहनियों का कटान कर देते हैं जिससे कि पौधों की वृद्वि पर प्रभाव तो पड़ता ही है और इसकी वृद्धि क्षमता कम होने लगती हैं तथा कभी-कभी पौधा सूखकर मर जाता है। शाखा कटान हमेशा पौधों की शाखाओं के ऊपरी एक तिहाई भाग को छोड़कर दो तिहाई भाग से करनी चाहिए। परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि जिस पौधे में एक बार कटाई की गयी हो तो उसकी दोबारा कटाई नहीं करनी चाहिए। वर्षा ऋतु में अनियंन्त्रित शाखा कटान से उस स्थान की मृदा क्षरण की सम्भावना अधिक होती हैं। इसलिए इस ऋतु में जहां तक संभव हो वृक्ष कटान नहीं करना चाहिए।

बीज बुवाई द्वारा- हिमकॉन संस्था ने पिछले एक वर्ष के अनुभव से जाना है कि बांज के पौध रोपण के बजाय फरवरी-मार्च में बांज रोपाई वाले स्थानों पर पौधरोपण करने के बजाय बीजों की सीधी बुवाई से भी किया जा सकता है। इसके लिए गड्ढों से गड्ढों की दूरी एक मी0 तथा प्रत्येक गड्ढ़ें मे दो बीजों की बुवाई की जानी चाहिए। जमीन को अच्छी तरह से खुदाई कर भुर- भुरी बना देना चाहिए। बीजों का अंकुरण मई के प्रथम सप्ताह से अन्तिम सप्ताह तक होता है। पौधों की देख-रेख समय-समय पर करनी चाहिए ।

- राकेश बहुगुणा

हिमकॉन, साबली, टिहरी गढ़वाल

" Himalayas are not only near to us, but also very dear, for they have always been a part of our history and tradition, our thinking and poetry, our worship and devotion."

- Jawaharlal Nehru

Addressing water quality issues in Himalayan region

Himalaya seva sangh has initiated the second phase of its project in the Himalayan region on water issues with the support of Arghyam from July 2009 onwards. After having several rounds of discussions with partner organizations and communities along with field visits detailed survey format was adopted to conduct base line survey. HSS has now taken up six of its partner organizations to implement the project in the first phase of its implementation.

All the partner organizations have decided to take up six villages in their area of work for sustained intervention, the details of which are given below. The survey format was shared with all the partner organizations and the data collection work is going on.

A meeting cum exchange program of activists from all the partner organizations was organized at HIMCON, Sabli, Tehri Garhwal to share and discuss about the program and chalk out a plan of action and activities to under taken. 12 people attended the meeting from six organizations of Uttarakhand and Jammu and Kashmir .A list of it is given below.

This three day exposure cum discussion meeting was held from 28th to 30th October 2009 at Sabli . Apart from discussing and sharing experiences on water and sanitation issues a detailed plan of action was jointly made which is as follows.

It was decided during this meeting that the construction cum training program on **slow sand filter** and **eco sanitation** (Toilet) would be conducted in the month of January 2010.

The meeting also discussed at length the study of Naula/ Chashma/ Springs and came with a study plan for which questioner was designed. This study would be conducted as a collective effort of all the organizations.

All the partner organizations have decided to continue with the study and survey of their selected villages and bring out information by the first week of December 2009.

Sl. No.	Name	Organization
1.	Nain Singh Dangwal	Gramin Ekta Shiksha Trust , Nainital
2.	Gita Bisht	Gramin Ekta Shiksha Trust , Nainital
3.	Himla	HPSS, Matli, Uttarkashi
4.	Zakir Ali	HPSS, Matli, Uttarkashi
5.	Sunny Dutta	Gandhi Seva Center, J&K
6.	K.L. Bangotra	Gandhi Seva Center, J&K
7.	Raju Kandpal	Mahila Haat, Almora
8.	Nagendra Dutt	TPVS, Dunda, Uttarkashi
9.	Sashi Kant	HIMCON, Sabli
10.	Uma Shankar	HIMCON, Sabli
11.	Rakesh	HIMCON, Sabli
12.	Manoj Pande	HSS, New Delhi

Proposed action targets up to December 2009

S.N.	Oranization Name	Chals construction	Plantation (Ha)	Cleaning of Springs and Naula
1.	Gramin Ekta Shiksha Trust, Nainital	02	01	03
2.	HPSS, Matli, Uttarkashi	06	03	06
3.	Gandhi Seva Center, J&K	02	02	06
4.	Mahila Haat, Almora	08	05	06
5.	TPVS, Dunda, Uttarkashi	03	02	04
6.	HIMCON, Sabli	03	05	03
	Total	**24**	**18**	**28**

From : HSS Report

Vanishing Wisdom Endangered Landscapes

A case study on the Chaals in Tehri and Uttarkashi

Traditional rainwater harvesting enjoys a special place in the history and culture of the state of Uttarakhand. Structures such as *chaal, khaal, chuptyaula, simar, naula/ baori, dhara, guhl,* etc are part of the Uttarakhand landscape as much as local conversations, folklore and songs.

It is acknowledged that these structures are excellent examples of local water wisdom in practice. The seminal Dying Wisdom written by Anil Agarwal & Sunita Narain in 1997 brought to light the ecological and engineering principles of some of these structures, especially *guhls* (irrigation canals). They were recognized as unique and active examples of decentralized Farmer Managed Irrigation Systems (FMIS). Later, People's Science Institute (PSI), an NGO based in Dehradun extensively documented various other water harvesting structures and cultural practices associated with the same.

Of all the celebrated water harvesting structures, one lesser known is the *chaal*. By standard definition *chaals* are generally "found along mountain ridge tops, in the saddle between two adjacent crests. They were formed in the past by the glacial action of snowmelt, resulting in the formation of small lakes or ponds with a relatively thick soil bed." Investigations in a number of villages and habitations in Garhwal region confirm that *chaals* were earlier located by shepherds or farmers who took their livestock in the higher reaches for grazing. In early stages, they realised that these *chaals* were a good drinking water source for both livestock and humans. Hence, there was an attempt to harvest this water by constructing an earthen wall around it. These *chaals* are generally referred to as *"paramparik"*, i.e. traditional *chaals*.

Over the years, as upstream forest lands went steadily out of bounds for local communities, "*chaals*" moved downstream and largely came to denote livestock water provisioning. However, during its journey, functionality of *chaals* acquired newer and more scientific dimensions. A conversation with elders in the village of Lodhna and Thaandi located in Dunda Block, Uttarkashi established a clear connection between *chaals* located upstream and flow of water in *dharas* (i.e. springs) downstream. Elders were also convinced that unless there is a *chaal* located somewhere above a *dhara,* the latter will not yield optimal water, especially in summer. Hence recharge function of *chaals*, which is now supported by hydrological research by PSI have led to their also being defined as units of groundwater and sub surface water recharge. This groundwater recharge gets tapped through *dharas* (i.e. springs), located downstream and the sub surface discharge through *guhls,* which benefits from increased flow in streams.

Unfortunately, loss of management rights of forests, conversion of forest type from broad leaved

to coniferous, restrictions on grazing, and finally stress migration of rural youth affected *chaal* construction and management. The purpose and need of *chaals* for maintaining a healthy catchment was wisdom left with village elders with nobody to pass it onto.

This impasse has slowly witnessed a positive change thanks to civil society initiatives. The most notable took place in Ufrainkhal region in the district of Pauri Garhwal through the leadership of Sachidanand Bharati. Himalaya Seva Sangh (HSS), an umbrella organisation for a number of grassroots organisations in Western Himalaya also rallied for reviving *chaals*, especially in the districts of Uttar Kashi and Tehri Garhwal.

The campaign led by HSS has witnessed large scale participation from women in the region. This is not surprising since women are key users of *chaals*, as they needed it for providing water to their livestock while out grazing. Most importantly, since collecting drinking water is a daily domestic chore, the relation of *chaals* with water availability in springs when explained helped to galvanize participation. Hence, from being mere users, they are now becoming managers and decision makers of their water assets.

However, this silver cloud seems to have a dark lining. *Chaals* are witnessing existential crises, again, and this time at an unprecedented scale. Part of it stems from being identified solely with livestock water provision, other being its rudimentary nature.

Chaals are now rapidly getting "modernized". The modernization drive has two main drivers. One is based on interpreting *chaals* as single purpose entities. Prioritisation of livestock water provisioning has now made storage the holy grail of interventions by State agencies. The importance its recharge functions is unknown to engineers housed in the Departments and neither articulated by elected representatives as they themselves view *chaals* from the same lens.

While inadequate knowledge can be addressed through campaigns and outreach, the bigger challenge is to counter the political economy that pushes "concretization" of *chaals*.

The National Employment Guarantee Act could have helped revived *chaals* at a reasonable scale. Unfortunately, it seems to be going the other way. Constructing a *chaal* involves zero material cost and hundred percent labour costs. Given a *chaal* can get constructed in a single day, it implies very little expense. Hence NREGA funds allocated to a Gram Panchayat would largely go unspent if *chaals* had to be repaired or constructed the traditional way using local resources such as mud and rocks. Discussion with Gram Pradhan's in the some of the villages in Uttarkashi and Tehri Garhwal helped understand how this bottleneck was dealt with. In most cases, the headman requested for cement application. While the publicly articulated reason was strengthening of *chaals*, the tacit was to increase materials cost. Use of cement also implies use of skilled masons, and resultant increase in labour costs and person days. Hence a *chaal* that could have been easily constructed for two – three thousand rupees was now being budgeted for fifty thousand.

As claimed by NGO workers, most of the *chaals* constructed under the NREGA scheme in villages in Uttar Kashi and Tehri Garhwal are bereft of water. Villagers state that while *chaals* constructed with local raw materials tend to retain water all year around, it was not the case with NREGA *chaals*, which retained water only during post monsoons. Moreover, *chaals* when constructed with local materials are easy to repair. When constructed with brick and cement masonry, breaches in the structure cannot be fixed locally.

The ecological impacts of cementing *chaals* is yet to be measured, given that cement doesn't allow percolation of stored water and neither collection of seepage. This may have severe implications on water availability for both drinking water and agriculture in the village catchment.

Such uninformed interventions in the landscape are playing out in the theatre of increasing water scarcity. In 2009, Uttarakhand witnessed severe climatic reversals. In the month of January and February, the much required rainfall for wheat cultivation witnessed 90 per cent less than the average rainfall in previous years. In June and August in the district of Tehri Garhwal, the deficit was 75%. Adaptation to such changes requires a marriage between different knowledge systems.

In such a context, civil society has to play a significant role in bridging the gap between local experiential knowledge and mainstream engineering paradigms. Political complexities in this issue are largely originating from vested interest and knowledge asymmetry. The task is to inform local political leadership and simultaneously generate demand for sound water resource engineering practices in their constituencies.

- Amitangshu, Arghyam, Bangalore

जल संरक्षण तथा प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन कार्यक्रम

के तहत ग्रामीण एकता शिक्षा ट्रस्ट द्वारा सम्पादित गतिविधियां

गांवों का सर्वेक्षण- उपरोक्त कार्यक्रम के क्रियान्वयन हेतु रामगढ़ नदी के जलागम क्षेत्र में स्थित गांवो का सर्वेक्षण किया गया तथा गांव में कार्यक्रम की आवश्यकता, सामुदायिक सहयोग आदि का वास्तविक आंकलन किया गया। लगभग क्षेत्र के 8 गांवों (सुनकिया, बूढ़ीबना, गजार, कोकिलबना, सूपी, लोद, गल्ला, गढ़गांव आदि) का आरम्भिक सर्वेक्षण किया गया। गांव तथा वन पंचायतों से जानकारी ली गयी, एवं अन्य संस्थाओं द्वारा किये जा रहे क्रियाकलापों के विषय में सूचनाएं एकत्र की गयी।

गांवों का चयन :- उपरोक्त गांवो में किये गये सर्वेक्षण के पश्चात गांवो में कार्यक्रम की आवश्यकता तथा सामुदायिक सहयोग की सुनिश्चितता के आधार पर 5 गांवों का चयन किया जिनका विवरण निम्नानुसार है :-

क्र0	गांव का नाम	विकास खण्ड
1	सुनकिया	धारी
2	सुनकिया(नवीन)	धारी
3	बूढ़ीबना	धारी
4	कोकिलबना	धारी
5	सूपी तल्ला	रामगढ़

सुनकिया चूंकि क्षेत्रफल तथा आबादी के दृष्टिकोण से बहुत बड़ी ग्राम सभा है अतः सुनकिया ग्राम सभा को दो गांवो के रूप में विभाजित किया गया है।

उपरोक्त चयनित गांवो में गहन सर्वेक्षण कर वन पंचायतों की स्थिति, गांवो के जल एवं वन संसाधनों की वर्तमान स्थिति, जल प्रदूषण, पारम्परिक जल स्रोतों की स्थिति आदि के विषय में विस्तार से जानकारी एकत्र की गयी।

अभी तक सम्पादित गतिविधियां :-

- ग्राम सुनकिया, सुनकिया नवीन, कोकिलबना तथा सूपी देवराटाण्डा में ग्राम पंचायत के माध्यम से प्रस्ताव हासिल किया गया तथा पंचायत व वन पंचायत के सदस्यों को कार्यक्रम की विस्तृत जानकारी दी गयी।

- ग्राम सुनकिया, कोकिलबना तथा सूपी देवराटाण्डा में महिला संगठनों का गठन किया गया, उन्हें कार्यक्रम की जानकारी दी गयी। महिला संगठनो के साथ नियमित बैठकें भी की जा रही है।- अरविन्दा आश्रम रामगढ़ के सहयोग कसियालेख बाजार में नीर संगठन के साथ मिलकर चार कूड़ादान स्थापित किये गये। जिन्हें स्थानीय सहयोग से स्थापित किया गया तथा भविष्य में भी इन कूड़ादानों की देख-रेख की जिम्मेदारी स्थानीय लोगों की ही सुनिश्चित की गयी।

- सुनकिया गांव के मुख्य जलस्रोत (दोमिल) में फैलायी जा रही गन्दगी को रोकने हेतु गांव के युवा संगठन तथा महिला संगठनों के सहयोग से स्रोत की सफाई की गयी। तथा आपसी सहयोग से स्रोत पर गन्दगी न किये जाने हेतु साईन बोर्ड लगाया गया। फलस्वरूप राहगीरों द्वारा की जा रही गन्दगी में काफी कमी आयी है।

- सुनकिया, बूढ़ीबना, कोकिलबना तथा सूपी के गांवों में स्थित विद्यालयों में जाकर बच्चों के साथ पर्यावरणीय तथा जल की स्वच्छता विषय पर चर्चा की गयी व बच्चों को जागरूक करने का प्रयास किया गया।

जल स्रोत संरक्षण की दिशा में की गयी गतिविधियां :-

- ग्राम सुनकिया, सुनकिया नवीन, सूपी तथा कोकिलबना में पारम्परिक नौलों का चिन्हिकरण किया गया जिनपर भविष्य में कार्य किया जायेगा तथा उनका विस्तृत अध्ययन किया जायेगा।

चिन्हित नौलो का विवरण निम्नानुसार है :-

क्र.सं.	नौले का नाम	गांव का नाम	निर्भर परिवार	स्थिति
1	कमोला नौला	सुनकिया	25	वर्षभर पानी रहता है
2	नतोपिया नौला	सुनकिया	10	वर्षभर पानी रहता है
3	गांवसारी नौला	सुनकिया	15	गर्मियों में पानी नहीं
4	कोकिलबना नौला	कोकिलबना	28	गर्मियों में पानी नहीं
5	पनेरा स्रोत	सूपी	40	वर्षभर पानी रहता है

उपरोक्त सभी चिन्हित नौलो में पानी लगातार कम होता जा रहा है जहां पर जल मात्रा बढ़ाने हेतु प्रयास किये जाने की प्रबल आवश्यकता है।

- ग्राम कोकिलबना के मुख्य जल स्रोत खोपा गधेरे (जिससे वर्तमान में सम्पूर्ण गांव को जलापूर्ति होती है) के जल ग्रहण क्षेत्र में महिला संगठनो के माध्यम से दिनांक 29/11/2009 को 4 चालों का निर्माण किया गया जिसमें संगठनों की 15 महिलाओं के अतिरिक्त वन पंचायत के प्रतिनिधियों द्वारा भी भागीदारी की गयी।

आम सहमति से चाल निर्माण के स्थानों का चयन किया गया। साथ ही तय किया गया कि महिला संगठनों के माध्यम से भविष्य में भी नियमित अन्तराल से चालों की सफाई आदि की जायेगी।

- ग्राम सुनकिया, कोकिलबना तथा सूपी में ग्राम पंचायतों तथा वन पंचायतों के साथ भी भविष्य में चाल खाल निर्माण में साथ मिलकर कार्य करने पर सहमति हुई।

- नैन सिंह डंगवाल
ग्रामीण एकता शिक्षा ट्रस्ट
गंगुवाचौड़ (नैनीताल)

This issue of HMN has been brought out by the collective inputs of :
Rakesh Bahuguna, Sushila Bhandari, Suresh Bhai, Bharat Dogra, Amitangshu, Nain Singh Dhangwal and Ajit Kumar of HSS.

Edited and compiled by : Manoj Pande

हमारे इस अभियान को सफल बनाने के लिए हम आपके सुझाव और विचार जानने को इच्छुक हैं।
If you have any suggestions and comments please write to us.

This issue of **Himalaya Man and Nature** has been supported by 'Arghyam'.

BOOK POST
Prined Matter only

To,

.....

.....

.....

If undelivered, return to:
Himalaya Seva Sangh
15, Rajghat Colony,
Gandhi Smarak Nidhi Complex,
New Delhi- 110002
Phone: 011-23319685
Email : hss@bol.net.in,himalayasevasangh@gmail.com
Website : www.himalayanwater.org
Printed at : Swastik Print Media Services
011-43764426, Email : swastik.pms@gmail.com